

(४)

जिन-बैन सुनत मोरी भूल भगी ॥टेक ॥
कर्मस्वभाव भाव चेतन को, भिन्न पिछानन सुमति जगी ॥१ ॥
निज अनुभूति सहज ज्ञायकता, सो चिर रुष-तुष-मैल पगी ॥२ ॥
स्याद्वाद धुनि निर्मल जलतैं, विमल भई समभाव लगी ॥३ ॥
संशय-मोह-भरमता विघटी, प्रकटी आतम सोंज सगी ॥४ ॥
'दौल' अपूरव मंगल पायो, शिवसुख लेन होंस उमगी ॥५ ॥

(५)

जिनवाणी माता दर्शन की बलिहारियाँ ॥टेक ॥
प्रथम देव अरहन्त मनाऊँ, गणधरजी को ध्याऊँ।
कुन्दकुन्द आचार्य हमारे, तिनको शीश नवाऊँ ॥१ ॥
योनि लाख चौरासी माहीं, घोर महादुःख पायो।
ऐसी महिमा सुनकर माता, शरण तुम्हारी आयो ॥२ ॥
जानै थाँको शरणो लीनों, अष्ट कर्म क्षय कीनो।
जनम-मरण मिटा के माता, मोक्ष महापद दीनो ॥३ ॥
ठाड़े श्रावक अरज करत हैं, हे जिनवाणी माता।
द्वादशांग चौदह पूव का, कर दो हमको ज्ञाता ॥४ ॥

(६)

महिमा है, अगम जिनागम की ॥टेक ॥
जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतम की ॥१ ॥
रागादिक दुःख कारन जानैं, त्याग बुद्धि दीनी भ्रम की ॥२ ॥
ज्ञान-ज्योति जागी उर अन्तर, रुचि बाढ़ी पुनि शम-दम की ॥३ ॥
कर्मबंध की भई निरजरा, कारण परमपरा क्रम की ॥४ ॥
'भागचन्द' शिव-लालच लाग्यो, पहुँच नहीं है जहँ जम की ॥५ ॥

(७)

चरणों में आ पड़ा हूँ, हे द्वादशांग वाणी।
मस्तक झुका रहा हूँ, हे द्वादशांग वाणी ॥टेक ॥

मिथ्यात्व को नशाया, निज तत्त्व को प्रकाशा ।
 आपा-पराया-भासा, हो भानु के समानी ॥१॥
 षट् द्रव्य को बताया, स्याद्वाद को जताया ।
 भवफन्द से छुड़ाया, सच्चि जिनेन्द्र वाणी ॥२॥
 रिपु चार मेरे मग में, जंजीर डाले पग में ।
 ठाड़े हैं मोक्ष-मग में, तकरार मोसों ठानी ॥३॥
 दे ज्ञान मुझको माता, इस जग से तोड़ूँ नाता ।
 होवे 'सुदर्शन' साता, नहीं जग में तेरी सानी ॥४॥

(८)

नित पीज्यो धी धारी, जिनवाणी सुधा-सम जानिके।टेक॥
 वीर मुखारविंदतैं प्रकटी, जन्म-जरा भयटारी ।
 गौतमादि गुरु-उर घट व्यापी, परम सुरुचि करतारी ॥१॥
 सलिल समान कलिल मल गंजन, बुधमन रंजन हारी ।
 भंजन विभ्रम धूलि प्रभंजन, मिथ्या जलद निवारी ॥२॥
 कल्याणक तरु उपवन धरिनी, तरनी भवजल तारी ।
 बंधविदारन पैनी छैनी, मुक्ति-नसैनी सारी ॥३॥
 स्व-परस्वरूप प्रकाशन को यह, भानुकला अविकारी ।
 मुनिमन कुमुदिनि-मोदन शशिभा, शमसुख सुमन सुवारी ॥४॥
 जाके सेवत बेवत निजपद, नसत अविद्या सारी ।
 तीन लोकपति पूजत जाको, जान त्रिजग-हितकारी ॥५॥
 कोटि जीभ सों महिमा जाकी, कहि न सके पविधारी^१ ।
 'दौल' अल्पमति केम कहै यह, अधम-उधारन हारी ॥६॥

(९)

साँची तो गंगा यह वीतरागवाणी ।
 अविच्छिन्न धारा निजधर्म की कहानी ॥टेक॥

१. इन्द्र